ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

प्राचीन दक्षिण भारत के मंदिर और उनका अनुष्ठान

डॉ. मंजूषा मिश्रा

एसोशिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, का. सु. साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या

सारांश

दक्षिण भारत के मंदिरों का वर्गीकरण स्थापत्य कला की दृष्टि से मुख्य रूप से द्रविड़ तथा चालुक्य शैलियों में किया जा सकता है। द्रविड़ शैली के मंदिर मुख्यत: तमिल भाषी क्षेत्र में हैं और चालुक्य शैली के मंदिर कन्नड़ भाषा क्षेत्र में। दक्षिण पश्चिम तथा सुदूर दक्षिण केरल में चालुक्य और द्रविड़ शैली का प्रभाव रहा।

दक्षिण भारत में हजारों मंदिर हैं। उनमें से कुछ इतने प्राचीन और प्रतिष्ठित हैं कि वे तीर्थ स्थल बन गए हैं। उनमें सबसक पुराने 14वीं शताब्दी के स्मारक हैं। उनकी प्राचीनता तथा कलात्मक उत्तकृष्टता के अलावा, एक रोचक तथा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि ये मंदिर दीर्घकालीन विकास प्रक्रिया से गुजरे हैं और दक्षिण भातर की तत्कालीन संस्कृति के साक्षी के रूप में विद्यमान हैं। इन मंदिरों की विशालता, मूर्तिकला, छत, मीनारें तथा चित्र वल्लरीयुक्त दीवारें और स्तम्भ शिल्प का उत्तकृष्ट नमूना हैं। लगभग प्रत्येक व्यक्ति, जो भी दक्षिण भारत के भ्रमण के लिए जाता है, वहां पर मंदिरों की बहुतायत को देखकर इस धारणा के साथ लौटता है कि दक्षिण भारत मंदिरों की भूमि है ।

परिचय

एक मंदिर के निर्माण का कार्य पूरा होने में अनेक साल लगते थे, इससे सैकड़ों कारीगरों, शिल्पियों तथा इंजीनियरों को रोजगार मिलता था । पड़ोस के प्रांतों के सर्वोत्तम कारीगरों को संरक्षण प्राप्त होता था,और इस प्रकार एक मंदिर के निर्माण के दौरान प्रतिभाशाली मूर्तिकारों तथा चिनाई का काम करने वाले राजगीरों की एक पीढ़ी प्रशिक्षित हो जाती थी ।[1,2]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

गुरुवयूर, केरल

मंदिरों में किए जाने वाले नित्य-प्रति के धार्मिक अनुष्ठानों से अनेक लोगों जैसे पुजारियों वेदपाठी, ब्राह्मणों, संगीतकारों, नर्तकियों, शिक्षकों, पुष्पविक्रेताओं, दर्जियों, लिपिकों, लेखापालों तथा विभिन्न प्रकार के अन्य कार्य करने वालों, को सुनिश्चित रोजगार मिल जाता था । ऐसे बहुत से अभिलेख मिले हैं जिनमें मंदिरों में किए जाने वाले निश्चित अनुष्ठानों तथा कर्मकांडों के लिए बजट की व्यवस्था का विस्तारपूर्वक उल्लेख मिला है । मंदिर का उत्सव सामाजिक आमोद-प्रमोद तथा आनन्द का अवसर हुआ करता था और आस-पास के ग्रामों तथा नगरों से लोग इस सामान्य आमोद-प्रमोद में भाग लेने के लिए एकत्रित होते थे । ये उत्सव मेलों के रूप में समाप्त होते थे जो प्राय: दो या दो से अधिक दिन तक चलते थे । आसपास तथा दूरवर्ती स्थानों से व्यापारी तथा छोटे-छोटे दुकानदार वहां पर अपने सामान की बेचने या उसका विनिमय करने के लिए जाते थे ।[3,4]

तिरुमला, आंध्र प्रदेश

मंदिरों का युग वास्तव में विश्वास व निष्ठा का युग था । उस समय शास्त्रीय ज्ञान की उच्चतम बौद्धिक लक्ष्य माना जाता था और व्यक्ति की योग्यता के मूल्यांकन के लिए निश्चित किए गए मानदंड बहुत ही श्रेष्ठ थे । अपनी प्रसिद्ध तथा मान्यता के इच्छुक विद्वानों के बीच, वाद-विवाद तथा विचार-विमर्श मंदिर के प्रांगण में ही हुआ करते थे । इस प्रकार इन मंदिरों में, विभिन्न प्रकार के मतों तथा दार्शनिक विचारधाराओं का प्रचार करने के लिए महत्वपूर्ण मंच मिल जाता था ।
प्राय: मंदिर के अहाते ही सार्वजनिक आमोद-प्रमोद व मनोरंजन के एकमात्र स्थान होते थे । कुश्तियों की प्रतियोगिताएं संगीत तथा नृत्य के कार्यक्रम मंदिर के उत्सव के विशेष अवसरों में जान डाल कर उन्हें रोचक बना देते थे । धनी तथा निर्धन सभी वर्गों के लोगों को आमोद-प्रमोद के इन कार्यकमों का आनन्द लेने का समान अवसर मिलता था । मंदिर के आनन्दोत्सव के दौरान मंदिरों के साथ लगे विश्राम-गृहों में यात्रियों के लिए आवास तथा भोजन की निःशुल्क व्यवस्था की जाती थी ।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

मंदिरों के साथ विद्यालय अथवा पाठशालाएं भी जुड़ी हुई थी । उनमें विद्यार्थी पढ़ाई, लिखाई व गणित से लेकर धर्मशास्त्र, दर्शन तथा नीतिशास्त्र तक प्रत्येक प्रकार की शिक्षा प्राप्त करते थे । अस्पताल प्राय: मंदिर के प्रांगण में स्थित होते थे । नगर के मामलों अथवा वैयक्तिक विवादों का निर्णय करने के लिए स्थानीय सभा अभवा पंचायत की बैठकें मंदिर में ही होती थीं ।[5,6]

सबरीमाला, केरल

माना जाता था कि यदि चुनाव अथवा लोगों के झगड़ों की सुनवाई देवताओं के समक्ष मंदिर में होगी तो उनमें सच्चाई तथा ईमानदारी रहेगी ।

दक्षिण भारत के ये विशिष्ट मंदिर जो कि स्थापत्य कला की दृष्टि से पूर्ण दिखाई देते हैं शताब्दियों के विकास तथा क्रम-विकास की देन हैं । यह इमारतों का एक मिश्रित समूह होता था जिनमें से कुछ ही वृत्तिमूलक उपयोगिता थी जबकि कुछ दूसरों का स्थापत्य तथा अलंकारिक महत्व तो था परन्तु उससे अधिक उनकी और कोई उपयोगिता नहीं थी । मंदिर की विभिन्न इमारतों को क्रम से मुख्य पूजागृह के साथ जोड़ दिया जाता था । ये इमारतें प्राय: अव्यवस्थित रूप में होती थीं और स्थापत्य कला की दृष्टि से उनका अधिक महत्व नहीं होता था । परन्तु वे परिष्कृत व विस्तृत धार्मिक अनुष्ठान की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपयोगी होती थीं और उत्सव के अवसर पर तो उनकी आवश्यकता और भी अधिक हो जाती थी।भक्तों के लिए स्वयं मंदिर ही "देवताओं" के आवास स्थान-"देव- स्थानम्" होने के नाते उपासना व आराधना की वस्तु थे । अत: उनके लिए केवल विशाल तथा भव्य होना ही पर्याप्त नहीं था, बल्कि यह भी आवश्यक था कि उनमें सौंदर्य तथा स्थायित्व भी हो । आरम्भ में मंदिर की स्थापत्यकला का विकास उपासना के एक साधारण आडम्बर रहित देव मंदिर के रूप में हुआ पार भक्तों की बढ़ती हुई भावात्मक अभिलाषा की पूर्ति के लिए उसने इमारतों के समूह का रूप धारण कर लिया है । पूर्णरूप से विकसित स्थापत्य कला वाले भवन में गर्भगृह, प्रकोष्ठ (अन्तरालय), मंडपम, गर्भगृह के ऊपर बुर्ज (शिखर), मठ अथवा आयताकार कक्ष, भव्य गोपुरम् अथवा द्वारों पर गुम्बज, असंख्य आले, मंडप तथा गुफा होती थी । ये सब ऐसे विकसित रूप हैं जो प्राचीन मंदिरों का डिजाइन बनाने वाले लोगों की कल्पना से बाहर थे ।[7,8]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

मंदिर निर्माण का यह महान युग जो सामान्यत: 500 ई के लगभग आरम्भ हुआ था और जो मदुरै तथा रामेश्वरम के महान मंदिरों के निर्माण के समय (1600 ई के लगभग) अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गया था, मध्य युग के दौरान यूरोप में हुए इसी प्रकार के आन्दोलन के युग से अनेक रूपों में मिलता-जुलता है । सातवीं शताब्दी में ब्राह्मणवाद के पुनरुत्थान के कारण समूचे उप-महाद्वीप में नई कला की ऐसी आकृतियों के प्रति लालसा थी जो पुराणों तथा महाकाव्यों की सुविदित विषय वस्तुओं के ऊपर आधारित हों । इसने जन-साधारण की धार्मिक तथा आध्यात्मिक आकांक्षध्यों को सुरुचिपूर्ण संतोष प्रदान किया और साथ ही साथ धर्म के रक्षक के रूप में लोकप्रियता तथा प्रसिद्धि के इच्छुक राजाओं तथा कुलीनों को भी इससे संतुष्टि प्राप्त हुई ।

मदुरई मीनाक्षी मंदिर, तमिलनाडु

भारत में मंदिर स्थापत्य कला का प्रारम्भ कब हुआ, इस बात का पता लगाने के लिए हम वर्तमान मंदिरों के उदाहरणों को दृष्टि में रखते हुए ऐहोल (मैसूर राज्य के बीजापुर जिले में) में पत्थर से बने देव मंदिरों को देखते हैं । ये मंदिर लगभग सबसे पहले बने थे । इन मंदिरों में से अधिकांश हिन्दू मंदिर हैं और कुछ जैन मंदिर हैं। इनका निर्माण उसी समय में हुआ था जिस समय उत्तरी तथा मध्यवर्ती भारत में गुप्त तथा वाकाटक राजाओं द्वारा देव मंदिरों का निर्माण कराया गया था । दक्षिण भारत में सामान्य रूप

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

से जो कला चालुक्य कला के नाम से जानी जाती है, ये ऐहोल मंदिर स्थापत्य की दृष्टि से उस कला के पूर्ववर्ती है । इस कला की विकास गति 13वीं शताब्दी के मध्य तक जारी रही । यद्यपि इस शैली के मंदिर मुख्य रूप से कन्नड़ भाषी प्रदेश तक सीमित हैं परन्तु इसका प्रभाव उत्तर में माउंट आबू तक पाया जाता है ।

दक्षिण तथा दक्षिण पूर्वी भाग में जिसमें मुख्य रूप से तमिल भाषी जिले तथा आध- प्रदेश के भाग शामिल हैं, मंदिर निर्माण की एक अलग शैली का विकास हुआ जिसे सामान्यत: द्रविड़ या द्रविड़ शैली के नाम से अभिहीत किया जाता है । [9,10] तंजोर, मदुरै, चिदाम्बरम, रामेश्वरम आदि के सुप्रसिद्ध मंदिर इसी शैली के मंदिर है । हमें आज उनके अनेक संकेन्द्रित अहाते, शानदार बुर्ज तथा हजारों स्तम्भों वाले अलंकृत मंडप दिखाई पड़ते है । वे हजारों वर्ष से भी अधिक समय के दीर्घकालीन विकास की मिश्रित देन है । वर्तमान उदाहरणों में से सबसे पहले उदाहरण जो लगभग 600 ई. से संबंधित है, मद्रास के दक्षिण में 58 किमी की दूरी पर मामल्लापुरम समूह के मन्दिर हैं ।

थंजावुर, तमिलनाडु

इनका निर्माण पल्लव वंश के राजाओं ने कराया था । शैलकृत तथा पत्थर से बने इन मंदिरों में स्थापत्य कला के सिद्धान्तों तथा लक्ष्य को समझने के लिए संघर्षरत कलाकारों का यह प्रयास अपरिष्कृत नहीं है बल्कि उनका यह काम दीर्घकाल से परम्परागत व्यवसाय में लगे निर्माताओं की अत्यन्त विकसित शैली का प्रतीक है । मामल्लापुरम समूह के मंदिरों की स्थापत्यकला के पूर्वज स्पष्टत: उनके पूर्ववर्ती मंदिर थे जो काल चक्र के विनाश से बच नहीं पाए । ऐसा संभवत: उनके निर्माण में प्रयुक्त सामग्री के

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

नाशवान होने के कारण हुआ है । यही कारण है कि सातवीं शताब्दी से पहले के द्रविड़ मंदिरों के विषय में हमें जानकारी नहीं मिलती ।

बौद्ध स्मारकों से इस विषय पर कुछ हद तक प्रकाश पड़ता है । ये सब अब खंडहर हैं जो आंध्र-प्रदेश में कृष्णा तथा गोदावरी नदियों के डेल्टा की खुदाई में मिले हैं । सम्राट अशोक के उत्साह के कारण ईपू तीसरी शताब्दी में बुद्ध का संदेश दक्षिण भारत के हृदय तक पहुंच गया था । इस बात का पता उन अनेक राजाज्ञाओं से चलता है जिनको उसने चट्टानों पर खुदवाया था । परन्तु उत्तर में बौद्ध कला का पूरा प्रभाव काफी बाद तक भी दिखाई नहीं पड़ता । कुछ चट्टानों में कटे हुए बौद्ध स्मारक और गोदावरी तथा कृष्णा नदियों के डेल्टा में पाई गई कुछ इमारतें स्थापत्य कला की दृष्टि से उत्तर में बौद्ध स्तूपों के दक्षिणी प्रतिरूप हैं । वे सम्राट अशोक के बाद के काल के अर्थात् लगभग 200-150 ईपू के हैं । अशोक की मृत्यु के बाद उसके विशाल साम्राज्य के विघटन तथा पतन के साथ ही दक्षिण भारत का शासन आध नामक स्थानीय शासकों के एक राजवंश के हाथ में आ गया । [11,12] वे भी बौद्ध ही थे । उनकी पहली राजधानी श्रीकाकुलम में थी और बाद में कृष्णा नदी के तट पर बसी अमरावती अथवा धान्यकटक नामक स्थानों पर थी । इन राजधानियों का दक्षिण भारत में धार्मिक स्थापत्यकला की दृष्टि से प्रथम स्थान हो गया था । इन स्मारकों के अवशेष उन भव्य इमारतों की कहानी कहते हैं जो इस क्षेत्र की शोभा बढ़ाने वाले सांची के स्तूप से अधिक भिन्न नहीं है । चट्टानों में बौद्ध मठ जैसे कि गुन्तुपाल्ले (कृष्णा जिला) और शंकरम पर्वतमाला (विशाखपत्तनम जिला) में हैं और भट्टीप्रोलु अमरावती, यज्ञपेट तथा घटाशाला के महान स्तूपों ने धार्मिक स्थापत्य कला की परम्परा से दक्षिण भारत को परिचित कराया जिसे शताब्दियों बाद ब्राह्मणवादी हिन्दू धर्म ने एक बिल्कुल नई स्थापत्य कला में परिवर्तित कर दिया था ।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

श्रीपुरम स्वर्ण मंदिर, तमिलनाडु

जिस भवन निर्माण कला का विकास भारत में ईसवी सन् की प्रारंभिक शताब्दियों में हुआ था वह न्यूनाधिक स्वतंत्र रूप से उप-महाद्वीप के पश्चिम, दक्षिण तथा उत्तर में विकसित हुई । परन्तु इन सब की प्रेरणा का मूल स्रोत एक ही था और जिन सिद्धांतों के आधार पर उनका निर्माण किया गया वे सब वास्तुशास्त्र के सामान्य सिद्धान्त थे ।[13,14]

विचार – विमर्श

दक्षिण भारतीय मंदिर राज्यों की वास्तुशिल्प प्रतिभा का सार है। दक्षिणी भारत को धार्मिक हितों के स्थानों के साथ बनाया गया है। दक्षिण भारत में मंदिर न केवल स्थापत्य बुद्धि का प्रतीक हैं बल्कि समृद्ध परंपरा और संस्कृति का जीवंत प्रतिनिधित्व करते हैं जिसने भारत को गौरवान्वित किया है। दक्षिण भारत के मंदिर भवन जैसे द्रविड़ियन, होलीसला, पांड्या और चालुक्य शैली का निर्माण अगमा और शिल्पा शास्त्रों के अनुसार किया गया है। पल्लव, चोलस, पांड्य और विजयनगर सभी ने प्राचीन काल से मंदिरों की दक्षिणी शैली में योगदान दिया। विमना और गोपुरम दक्षिणी शैली की विशिष्ट विशेषताएं हैं। विमना एक लंबा पिरामिड टॉवर है जिसमें कई उत्तरोत्तर छोटे मंजिले होते हैं। यह एक वर्ग आधार पर खड़ा है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

चामुंडी पर्वत, कर्नाटक

प्रकाश या बाहरी दीवार मुख्य मंदिर के साथ-साथ अन्य छोटे मंदिरों को भी कवर करती है। दक्षिण भारतीय राज्यों के लोकप्रिय मंदिरों के बारे में संक्षेप में चर्चा की गई है। आंध्र प्रदेश के मंदिरों में न केवल धार्मिक, बल्कि ऐतिहासिक मूल्य भी हैं। ये कला और मूर्तिकला के वास्तविक प्रदर्शन, दर्शन में एक साहसिक और जीवन भर का अनुभव हैं। कुछ महत्वपूर्ण मंदिर, जो आंध्र प्रदेश में प्रचलित हैं, लेपाक्षी मंदिर, हजार स्तंभ मंदिर, तिरुपति मंदिर, श्रीशैलम मंदिर, मुखलिंगम मंदिर, जैन मंदिर, चेन्नाकेशव मंदिर, गनुपदी सोमेश्वर मंदिर, चेन्नेकस्वामी मंदिर आदि हैं। कर्नाटक के मंदिर परंपरा और संस्कृति में बहुत पुराने और समृद्ध हैं। मंदिर विशिष्ट द्रविड़ शैली के हैं। ये मंदिर समय की कठिनाइयों से बच गए हैं। [15,16] इस क्षेत्र के कुछ महत्वपूर्ण मंदिर हैं बुल मंदिर, गुफा मंदिर, विरुपाक्ष मंदिर, विठ्ठल मंदिर, चामुंडेश्वरी मंदिर, हिडिंबेश्वर मंदिर, चन्नेकेश्वरा मंदिर, कृष्ण मंदिर, अटललिंग मंदिर, हजारा मंदिर, गवि गंगादेश्वर मंदिर आदि। केरल राज्य में मौजूद मंदिर देश के किसी भी अन्य हिस्सों में मौजूद मंदिरों से अलग हैं। केरल में मंदिर क्षेत्र के भूगोल के साथ तालमेल रखते हैं और क्षेत्र की परंपराओं के साथ कंपन करते हैं। केरल के लोकप्रिय मंदिरों में श्री पद्मनाभस्वामी मंदिर, अंबालापुझा श्री कृष्ण मंदिर, सबरीमाला श्री अय्यप्पा मंदिर, गुरुवायूर श्री कृष्ण मंदिर, चोटानीकरा देवी मंदिर, एट्टूमनूर-वैकोम-कडुथुर्थी मंदिर, मन्नारसला – नागराजा मंदिर, तिरुवनमकुलम शिवम हैं। तमिलनाडु दक्षिण भारत के कुछ महत्वपूर्ण मंदिरों का निवास स्थान है। राज्य में महान कलात्मक मूल्य के कुछ स्मारक हैं। अधिकांश प्राचीन मंदिर मोर्टार और ईंट से बने थे और चट्टानों से निकले थे। रामेश्वरम, महाबलिपुरम, कांचीपुरम, चिदंबरम, मीनाक्षी मंदिर और एकंबारेश्वर मंदिर, तंजावुर जैन मंदिर तमिलनाडु के कुछ प्रसिद्ध मंदिर हैं। इन मंदिरों में, रामेश्वरम भगवान राम के मंदिर का द्वीप है। गुरुवायुर मंदिर, सबरीमाला मंदिर, शिवगिरी मंदिर, तिरुवल्ला मंदिर, एट्टुमानूर मंदिर, तिरुनावया मंदिर, अम्बालापुझा मंदिर, वैकोम मंदिर, ओचिरा मंदिर, थिरुनेली मंदिर, छोटानिककारा मंदिर, आदि कुछ अन्य दक्षिण भारतीय मंदिर हैं, जिनका महत्व भी है।

परिणाम

उत्तर भारत भी उसी प्रकार बहुत से मंदिरों की भूमि रहा है । परन्तु विंध्याचल पर्वत के दक्षिण में देश के भाग बार-बार के विदेशी आक्रमणों से मुक्त रहे और इस कारण अनेक धार्मिक स्मारक उनके स्वेच्छाचारी विनाश से बचे रहे । इस ऐतिहासिक स्थिति के कारण दक्षिण में मंदिर निर्माण कला का निरन्तर विकास होता रहा । तेरहवीं शताब्दी से उत्तरी भारत को प्रभावित करने वाली विदेशी संस्कृतियों का इस विकास पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । दक्षिण भारत में हजारों मंदिर है । उनमें से अनेक प्राचीन मंदिर उत्तम दशा में है और कुछ खंडहरों की हालत में हैं । नगरों में स्थित प्रसिद्ध मंदिरों में अलावा गावों तथा कस्बों में भी दो या दो से अधिक मंदिर पाए जाते हैं। उनमें से कुछ इतने प्राचीन और प्रतिष्ठित हैं कि तीर्थ-स्थल बन गए हैं । वर्तमान काल के मंदिरों में से अधिकांश मंदिर साधारण व आडम्बरहीन इमारतें हैं जिनमें कोई बड़ी कलात्मकता नहीं है। वास्तव में वे महान स्मारक प्राचीन काल के हैं । उनमें सबसे पुराने चौदहवीं शताब्दी के स्मारक हैं। उनकी प्राचीनता तथा कलात्मक उत्कृष्टता के अलावा, एक रोचक तथा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि वे मंदिर दीर्घकालीन विकास प्रकिया से गुजरे हैं और वे दक्षिण भारत को तत्कालीन संस्कृति के साक्षी के रूप में विद्यमान हैं।[17]

मामल्लापुरम, जिसे महाबलिपुरम् भी कहते हैं, के मंदिरों में सौंदर्य तथा लालित्य, तंजोर के विमान तथा मदुरै के गोपुरम की भव्यता और बैलूर तथा हेलबांड मंदिरों की उत्कृष्ट नक्काशी को देखकर उनकी प्रशंसा करते समय हमें उन लोगों के नामों का पता नहीं चलता जिन्होंने इन इमारतों का निर्माण किया था और उन पर सुन्दर नक्काशी की थी । कला को वे धर्मनिरपेक्ष तथा धर्मप्रधान के रूप में नहीं मानते हैं! उनकी दृष्टि में सभी प्रकार की कला एक थी जो मूलत: धार्मिक तथा प्रतीकात्मक थी। धर्मं वास्तव में सभ्यता एवं-सुसंस्कृत सत्ता का पर्याय था ।

Copyright to IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

मंदिर की वास्तुकला स्थानिक रूप में केवल इस बात को अभिव्यक्त करती थी कि उस समय निर्माताओं की "जीवन की मोक्ष" के प्रति कितनी प्रबल इच्छा थी । जिस देवता के नाम-पर वह समर्पित होता था वह "विश्व नियंता के सर्वोच्च सिद्धान्त" का प्रतीक होता था और आत्मिक प्रवृत्ति को दिशा प्रदान करता था ।
इस कारण मंदिर सब प्रकार के नागरिक तथा सामाजिक जीवन का केन्द्र बन गया था । अपनी इमारत की स्थिति तथा आकार के कारण मन्दिर का आसपास के क्षेत्र में बहुत प्रमुख स्थान था। उसकी मजबूती तथा आकार उन अन्य संस्थाओं को स्थायित्व का भाव प्रदान करते थे जिनका मुख्य कार्य, मंदिर के कार्य के समान ही परम्परागत मूल्यों की रक्षा करना था । चूंकि मंदिर सब किया-कलापों का केन्द्र होता था, अत: ग्राम तथा नगर उसके आसपास ही बस जाते थे । मंदिर का प्रभाव विशुद्ध धार्मिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्रों के अलावा अन्य क्षेत्रों पर भी पड़ा और अपने प्रभाव के कारण वह ग्राम की अर्थव्यवस्था का भी एक महत्वूपर्ण कारक बन गया । राजाओं, कुलीनों तथा साधारण भक्तों के निरन्तर दान से देवता प्रमुख भूस्वामी हो गया था । इससे मंदिर इतने धनी बन गए थे कि वे जरूरतमंद किसानों को रुपये उधार देकर कभी-कभी बैंकों के रूप में भी कार्य करते थे ।[18]

निष्कर्ष

रोजाना भगवान का अभिषेक किया जा रहा है। इस दौरान श्रद्धालु भगवान के दर्शन कर ढोक लगाते हैं और मनौतियां मांगते है। साथ ही जाते समय श्रद्धालुओं को प्रसाद वितरित किया जाता है। दक्षिण भारत में आध्यात्मिक पर्यटन के सबसे महत्वपूर्ण स्तंभों में से एक, कांचीपुरम में भारत में पाए जाने वाले कुछ सबसे प्रतिष्ठित हिंदू मंदिर हैं। कांचीपुरम को अपनी खूबसूरत 'कांचीपुरम साड़ियों' के लिए भी जाना जाता है और इसे 'हजारों मंदिरों का स्वर्ण शहर' भी कहा जाता है। यह शहर प्रसिद्ध कांची कामाक्षी मंदिर का घर है, जहां कामाक्षी (देवी पार्वती) देवी सबसे अधिक पूजी जाती हैं - भगवान शिव की पत्नी। कांचीपुरम में अन्य लोकप्रिय तीर्थ स्थलों में वरदराज पेरुमल मंदिर, एकंबरेश्वर मंदिर, और कुमारकोट्टम मंदिर हैं।[19]

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

कैलाशनाथ मंदिर – कांचीपुरम का प्राचीनतम शिव मंदिर

इन महान मंदिरों की विशालता, मूर्तिकला, छत, मीनासे तथा चित्र वल्लरी से युक्त दीवारों और स्तंभों के शिल्प की उत्कृष्टता को देखकर व्यक्ति अत्यन्त प्रभावित होता है। उस अलौकिक धैर्य को, जो शिल्पकारों की अनेक पीढ़ियों की इन रचनाओं में परिलिक्षित होता है और उस राजसी उदारता को, जिसने इसे संभव बनाया, देखकर हम दांतों तले उंगली दबा लेते हैं। वास्तुकला की इन उपलब्धियों में हिन्दुओं की जीवन को धर्म प्रधान बनाने की कामना तथा उसमें समस्त मानवीय आदर्शो और लक्ष्यों को खोजने की भावना छिपी हुई है । मंदिर वास्तव में ईश्वरवादी धर्म का सौन्दर्य सूत्र बन गया था । मंदिर के माध्यम से लोगों ने अपने इंद्रिय बोध को जो उनके विश्वासों का व आस्था के प्रतीक था, सुगम बनाने का प्रयास किया । ये विश्वास वास्तव में व्यक्तियों के अन्तकरण को एकान्त मेंप्रभावित तथा नियंत्रित करते थे । परन्तु धर्म, दर्शन तथा आचार के प्रत्यक्ष प्रतीक के रूप में मंदिर ने किसी अन्य संस्था की अपेक्षा अधिक सक्रिय भूमिका अदा की । मंदिर राजा, कुलीनों तथा जनसाधारण आदि सभी वर्गों के लोगों के लिए धर्म का प्रतीक हो गया था । मंदिर के निर्माण तथा अनुरक्षण की व्यवस्था करना जीवन का एक पुण्य कर्म हो गया था। मंदिरों के महान निर्माताओं तथा शिल्पकारों ने अभिव्यक्ति की मौलिकता की अपेक्षा परंपरा की अनुरूपता के माध्यम से आत्मभिव्यक्ति को रूप प्रदान किया । सामान्य रूप से उन्होंने अज्ञात नाम रहना ही ठीक समझा ।[20]

संदर्भ

1) "कई भाषाओं की भूमि में, हिंदी भाषा नहीं हो सकती" । डेक्कन क्रॉनिकल । 9 जून 2001
2) "उर्दू तेलंगाना में दूसरी आधिकारिक भाषा है क्योंकि राज्य ने विधेयक पारित किया है" । समाचार मिनट । 17 नवंबर 2007
3) पार्थसारथी, प्रसन्नन (2000), व्हाई यूरोप ग्रो रिच एंड एशिया डिड नॉट: ग्लोबल इकोनॉमिक डाइवर्जेंस, 1600-1850 , कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस , आईएसबीएन 978-1-139-49889-0
4) यूल, हेनरी; बर्नेल, एसी (2003)। हॉब्सन-जॉबसन: ब्रिटिश भारत की निश्चित शब्दावली । ऑक्सफोर्ड। आईएसबीएन 978-0-19-164583-9.
5) "हॉब्सन जॉब्सन डिक्शनरी में 'कर्नाटिक' शब्द की उत्पत्ति" । शिकागो विश्वविद्यालय। मूल से 14 जुलाई 2002 को संग्रहीत किया गया ।
6) अग्रवाल, डीपी (2006)। भारत में शहरी मूल (पीडीएफ) । उप्साला विश्वविद्यालय। मूल (पीडीएफ) से 25 मई 2006 को संग्रहीत ।
7) शॉफ, विल्फ्रेड (2002)। द पेरिप्लस ऑफ द एरिथ्रियन सी: ट्रैवल एंड ट्रेड इन द इंडियन ओशन बाय ए मर्चेंट ऑफ द फर्स्ट सेंचुरी । दक्षिण एशिया पुस्तकें. आईएसबीएन 978-81-215-0699-1.
8) जे. इन्स, मिलर । रोमन साम्राज्य का मसाला व्यापार: 29 ईसा पूर्व से 641 ई . ऑक्सफोर्ड यूनिवरसिटि प्रेस। आईएसबीएन 978-0-19-814264-5.
9) लैंडस्ट्रॉम, ब्योर्न (1964)। भारत के लिए क्वेस्ट । ऑलविन और अनविन। आईएसबीएन 978-0-04-910016-9.
10) एलिसिफ़, वादिम (2001)। द सिल्क रोड्स: हाईवे ऑफ कल्चर एंड कॉमर्स । यूनेस्को प्रकाशन / बरगहन पुस्तकें। आईएसबीएन 978-92-3-103652-1.
11) "उन्होंने हमारे क्षेत्र का प्रशासन किया" । द हिंदू । 4 जून 2007।
12) हिब्बर्ट, क्रिस्टोफर (1 मार्च 2000)। महान विद्रोह: भारत 1857 । पेंगुइन। पी। 221. आईएसबीएन 978-0-14-004752-3.
13) इंडियन नेशनल इवोल्यूशन: ए ब्रीफ सर्वे ऑफ द ओरिजिन एंड प्रोग्रेस ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस एंड द ग्रोथ ऑफ इंडियन नेशनलिज्म । कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस। 22 सितंबर 2009। पी। 59. आईएसबीएन 978-1-112-45184-3.
14) "अनुच्छेद 1" । भारत का संविधान । कानून मंत्रालय, भारत सरकार। 2 अप्रैल 2002को मूल से संग्रहीत ।
15) "राज्यों का पुनर्गठन" (पीडीएफ) । आर्थिक साप्ताहिक । 20 मार्च 2006को लिया गया ।

IJIRSET

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 4, Issue 4, April 2015

16) "सातवां संशोधन" . Indiacode.nic.in। मूल से 1 मई 2007को संग्रहीत किया गया
17) "राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956" (पीडीएफ) । indiaenvironmentportal.org.in । 19 मार्च 2006 को लिया गया ।
18) "राज्यों का पुनर्गठन" (पीडीएफ) । आर्थिक साप्ताहिक । 31 दिसंबर 2005 को लिया गया ।
19) पोद्दार, प्रेम (2 जुलाई 2008)। उत्तर औपनिवेशिक साहित्य का ऐतिहासिक साथी - महाद्वीपीय यूरोप और उसके साम्राज्य । एडिनबर्ग यूनिवर्सिटी प्रेस। आईएसबीएन 978-0-7486-3027-1.
20) "आंध्र प्रदेश पुनर्गठन अधिनियम, 2004" (पीडीएफ) । कानून और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार।